The Banyan Tree Journal
(An Open Access Peer-reviewed Multidisciplinary Journal)
Annual Journal, No. 2, June 2026 : 25-36
ISSN No. : 3108-0863
www.jtgdc.ac.in/journals

बेज़ुबान महिलाएँ : दिलीप कौर टिवाणा के नंगे पैरां दा सफर का जेंडर अध्ययन

गुरपिन्दर कुमार*
प्रो. चंदा देवी**

सारांश

'सबाल्टर्न' शब्द उन सभी व्यक्तियों और समुदायों को समाहित करता है जिन्हें सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक सत्ता-संरचनाओं द्वारा हाशिये पर धकेल दिया गया है। वर्ग, जाति और जेंडर के संदर्भ में यह अधीनता केवल भौतिक स्तर तक सीमित नहीं रहती, बल्कि गहरे मानसिक और वैचारिक स्तर पर भी कार्य करती है। प्रस्तुत शोध-पत्र दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर का जेंडर अध्ययन करते हुए यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि किस प्रकार पितृसत्तात्मक, सामंती और जातिगत समाज-व्यवस्था में स्त्रियों को 'बेज़ुबान' बना दिया जाता है। टिवाणा का लेखन केवल उनके निजी जीवन-अनुभवों का विवरण नहीं है, बल्कि वह सामूहिक स्त्री-स्मृति, सामाजिक इतिहास और सांस्कृतिक यथार्थ का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है (टिवाणा)। आत्मकथा में दादी, माँ और अन्य स्त्री-पात्रों के अनुभव यह दर्शाते हैं कि स्त्री-दमन केवल घरेलू स्तर पर नहीं, बल्कि पुत्र-प्राथमिकता, विवाह संस्था, संपत्ति-अधिकार और सामाजिक मान्यताओं के माध्यम से भी लगातार पुनरुत्पादित होता रहता है। सिमोन द बोउवार की 'स्त्री को अन्य के रूप में देखने की अवधारऑणा (बोउवार) और गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक के सबाल्टर्न (स्पिवाक) के आलोक में यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि स्त्री-सबाल्टर्न की आवाज को इतिहास और संस्कृति में व्यवस्थित रूप से दबा दिया जाता है। चेतना-प्रवाह तकनीक तथा ग्रामीणदृशहरी जीवन के सूक्ष्म चित्रण के माध्यम से नंगे पैरां दा सफर न केवल स्त्री-दमन को उजागर करती है, बल्कि स्त्री-प्रतिरोध और अस्मिता की खोज को भी अभिव्यक्त करती है। इस प्रकार यह आत्मकथा एक सशक्त नारीवादी और सामाजिक आलोचनात्मक पाठ के रूप में स्थापित होती है।

मूलशब्दः बेज़ुबान, सबाल्टर्न, जेंडर, पितृसत्ता, वर्ग, जाति, आत्मकथा

1. भूमिका

भारतीय समाज की संरचना ऐतिहासिक रूप से पितृसत्तात्मक रही है, जहाँ सत्ता, संसाधन तथा निर्णय-प्रक्रियाओं पर पुरुषों का वर्चस्व स्थापित रहा है। इस सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों की स्थिति प्रायः द्वितीयक, परिधीय और अधीनस्थ मानी जाती रही है। परिवार, समाज, धर्म और राज्य की सभी संस्थाएँ किसी न किसी रूप में इस पितृसत्तात्मक सोच को पोषित और पुनरुत्पादित करती रही

* शोध विद्यार्थी, हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, (वर्तमान में सहायक प्रोफेसर, सेंटर फॉर वीमेन स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज)

** प्रोफेसर, हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

हैं। परिणामस्वरूप स्त्री की पहचान, उसकी भूमिका और उसकी स्वतंत्रता को सीमित दायरों में बाँध दिया गया है। ऐसे में साहित्य, विशेषतः आत्मकथात्मक साहित्य, इन संरचनाओं को समझने और प्रश्नांकित करने का एक सशक्त माध्यम प्रदान करता है। आत्मकथा न केवल लेखक के निजी जीवन का वृत्तांत होती है, बल्कि वह उस सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश का भी दस्तावेज होती है जिसमें लेखक का व्यक्तित्व निर्मित हुआ होता है। स्त्री-आत्मकथाएँ इस दृष्टि से और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं क्योंकि वे उस इतिहास और अनुभव को स्वर देती हैं, जिसे प्रायः मुख्यधारा के इतिहास-लेखन में स्थान नहीं दिया गया। सिमोन द बोउवार का यह कथन कि "स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि बना दी जाती है" इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि स्त्रीत्व एक जैविक नहीं, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक निर्माण है (बोउवार)। भारतीय समाज में यह निर्माण और भी जटिल हो जाता है क्योंकि यहाँ जेंडर के साथ-साथ जाति और वर्ग भी स्त्री-अनुभव को गहराई से प्रभावित करते हैं। दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर इसी संदर्भ में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण कृति है। यह आत्मकथा केवल टिवाणा के व्यक्तिगत जीवन की कथा नहीं है, बल्कि वह उस व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना का दस्तावेज है जिसमें स्त्री को जन्म से मृत्यु तक विभिन्न प्रकार के नियंत्रणों, अपेक्षाओं और निषेधों से गुजरना पड़ता है। टिवाणा का लेखन यह स्पष्ट करता है कि स्त्री का जीवन केवल घरेलू दायरे तक सीमित नहीं होता, बल्कि समाज की सत्ता-संरचनाएँ उसके शरीर, उसकी इच्छा और उसकी चेतना पर निरंतर हस्तक्षेप करती रहती हैं (टिवाणा)।

नंगे पैरां दा सफर में चित्रित स्त्री-अनुभव पंजाब के ग्रामीण समाज में व्याप्त सामंती सोच, जातिगत भेदभाव और पितृसत्तात्मक मूल्यों को उजागर करते हैं। आत्मकथा में दादी, माँ, बुआ और अन्य स्त्री-पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार स्त्री को आज्ञाकारिता, त्याग और सहनशीलता की मूर्त प्रतिमा बना दिया जाता है। पुत्र-प्राथमिकता, कम उम्र में विवाह, शिक्षा से वंचित करना और संपत्ति-अधिकार से बहिष्कारकृये सभी तत्व स्त्री-दमन की उस संरचना को रेखांकित करते हैं, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रहती है।

गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक के अनुसार 'सबाल्टर्न' वह वर्ग है जिसकी न तो कोई स्पष्ट ऐतिहासिक उपस्थिति होती है और न ही जिसकी आवाज सत्ता के विमर्श में सुनी जाती है (स्पिवाक)। जब यह अवधारणा स्त्री के संदर्भ में लागू होती है, तो स्थिति और भी जटिल हो जाती है। स्त्री-सबाल्टर्न न केवल वर्ग और जाति के कारण, बल्कि अपने जेंडर के कारण भी दोहरे या तिहरे शोषण का शिकार होती है। नंगे पैरां दा सफर की स्त्रियाँ इसी स्त्री-सबाल्टर्न की प्रतिनिधि हैं, जिनका जीवन मौन, सहन और उपेक्षा के बीच गुजरता है।

यह आत्मकथा यह भी दर्शाती है कि स्त्री का मौन कोई स्वाभाविक अवस्था नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचनाओं द्वारा थोपी गई एक राजनीतिक स्थिति है। स्त्री की पीड़ा को 'नियति',

'परंपरा' या 'संस्कार' कहकर वैध ठहरा दिया जाता है, जिससे शोषण की प्रक्रिया अदृश्य बनी रहती है। टिवाणा का लेखन इस अदृश्यता को तोड़ता है और स्त्री-अनुभवों को भाषा प्रदान करता है। इस दृष्टि से नंगे पैरां दा सफर केवल एक साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि एक सामाजिक हस्तक्षेप भी है।

नारीवादी आलोचना के आलोक में देखा जाए तो टिवाणा की आत्मकथा स्त्री-अस्मिता की खोज का पाठ भी है। यह कृति दिखाती है कि शिक्षा, आत्मचिंतन और लेखन स्त्री के लिए प्रतिरोध के माध्यम बन सकते हैं। टिवाणा स्वयं एक शिक्षित और संवेदनशील लेखिका के रूप में उस व्यवस्था को प्रश्नांकित करती हैं, जिसका वह हिस्सा भी रही हैं। यही द्वंद्व उनके लेखन को विशिष्ट और प्रामाणिक बनाता है।

इस प्रकार, नंगे पैरां दा सफर भारतीय स्त्री-आत्मकथात्मक साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यह आत्मकथा पितृसत्ता, वर्ग, जाति और जेंडर के अंतर्संबंधों को उजागर करते हुए स्त्री-अनुभवों की जटिल संरचना को सामने लाती है। प्रस्तुत शोध-पत्र की भूमिका के रूप में यह खंड यह स्पष्ट करता है कि टिवाणा का लेखन केवल व्यक्तिगत स्मृतियों का संकलन नहीं, बल्कि एक व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक आलोचना है, जो स्त्री की 'बेजबानी' को शब्द और अर्थ प्रदान करती है।

2. दिलीप कौर टिवाणाः जीवन और रचनात्मक संदर्भ

दिलीप कौर टिवाणा पंजाबी साहित्य की एक प्रमुख और संवेदनशील स्त्री-लेखिका हैं, जिनका रचनात्मक योगदान स्त्री-अनुभवों की सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक जटिलताओं को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनका लेखन उन स्त्री-जीवन के पक्षों को सामने लाता है जिन्हें प्रायः मुख्यधारा के इतिहास, साहित्य और आलोचना में हाशिये पर डाल दिया गया है। विशेष रूप से उनकी आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर न केवल एक व्यक्तिगत जीवन-कथा है, बल्कि वह पंजाब के सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास का एक सशक्त दस्तावेज भी है (टिवाणा)।

टिवाणा का जन्म एक सामंती जमींदार परिवार में हुआ, जहाँ संपन्नता, सामाजिक प्रतिष्ठा और सत्ता का प्रभुत्व था। किंतु इस विशेषाधिकार प्राप्त सामाजिक स्थिति के बावजूद, एक स्त्री होने के नाते उन्हें भी उसी पितृसत्तात्मक व्यवस्था का सामना करना पड़ा, जो स्त्रियों को आज्ञाकारिता, सहनशीलता और त्याग की सीमाओं में बाँध देती है। यही द्वंद्वकृविशेषाधिकार और स्त्रीगत अधीनताकृउनके लेखन को विशिष्ट बनाता है। वे उस वर्ग से आती हैं जो सामाजिक सत्ता के केंद्र में है, फिर भी उनकी संवेदना उन स्त्रियों के साथ है जो वर्ग, जाति और जेंडरकृतीनों स्तरों पर शोषण का शिकार हैं।

नंगे पैरां दा सफर में टिवाणा ने अपने जीवन के अनुभवों के माध्यम से पंजाब के ग्रामीण समाज की सामंती संरचना, जातिगत भेदभाव और पितृसत्तात्मक मूल्यों का सूक्ष्म और यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किया है। आत्मकथा में दादी, माँ, बुआ और अन्य स्त्री-पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि

किस प्रकार स्त्री का जीवन सामाजिक अपेक्षाओं और परंपराओं के बोझ तले दबा रहता है। यहाँ स्त्री का मूल्यांकन उसके मानवीय गुणों से नहीं, बल्कि उसकी उपयोगिताकृविशेषतः पुत्र-प्रसवकृके आधार पर किया जाता है। यह स्थिति सिमोन द बोउवार द्वारा प्रतिपादित 'स्त्री को अन्य के रूप में देखने' की अवधारणा की पुष्टि करती है (बोउवार)।

टिवाणा की माँ चंद कौर का चरित्र उनके रचनात्मक संदर्भ में विशेष महत्त्व रखता है। चंद कौर का जीवन पुत्र-प्राथमिकता, घरेलू उपेक्षा और मानसिक उत्पीड़न की त्रासदी को उजागर करता है। यह अनुभव केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि उस सामूहिक स्त्री-अनुभव का प्रतिनिधित्व करता है, जो भारतीय समाज में व्यापक रूप से विद्यमान है। टिवाणा इन अनुभवों को भावुकता के बजाय सामाजिक आलोचना के रूप में प्रस्तुत करती हैं, जिससे उनका लेखन आत्मकथात्मक होते हुए भी वस्तुनिष्ठ और विश्लेषणात्मक बन जाता है।

टिवाणा की रचनात्मक दृष्टि केवल स्त्री-पीड़ा के वर्णन तक सीमित नहीं है, वह उसके कारणों और संरचनाओं की भी पहचान करती है। जाति और वर्ग के संदर्भ में स्त्री की स्थिति को रेखांकित करते हुए वे दिखाती हैं कि निम्न वर्ग और निम्न जाति की स्त्रियाँ किस प्रकार दोहरे और तिहरे शोषण का सामना करती हैं। जयवंती डिमरी के अनुसार ग्रामीण समाज में स्त्री की स्थिति वर्गीय और जातिगत ढाँचों से गहराई से प्रभावित होती है (डिमरी)। टिवाणा का लेखन इस सामाजिक यथार्थ को जीवंत रूप में प्रस्तुत करता है।

टिवाणा का रचनात्मक योगदान इस अर्थ में भी महत्त्वपूर्ण है कि वे स्त्री-अनुभव को केवल पीड़ित चेतना के रूप में नहीं, बल्कि एक विकसित होती हुई स्त्री-चेतना के रूप में प्रस्तुत करती हैं। शिक्षा, आत्मचिंतन और लेखन उनके लिए प्रतिरोध के साधन हैं। उनका स्वयं का लेखिका बनना पितृसत्तात्मक सीमाओं को लाँघने की प्रक्रिया का प्रतीक है। इस संदर्भ में उनका लेखन एक प्रकार का आत्म-सशक्तिकरण भी है, जो अन्य स्त्रियों के लिए प्रेरणास्रोत बनता है।

गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक के अनुसार सबाल्टर्न की सबसे बड़ी समस्या उसकी 'आवाज का अभाव' है (स्पिवाक)। टिवाणा का लेखन इस मौन को तोड़ने का प्रयास है। वे उन स्त्रियों को भाषा और स्वर देती हैं, जिन्हें समाज ने चुप रहने के लिए बाध्य किया है। इस दृष्टि से नंगे पैरां दा सफर को स्त्री-सबाल्टर्न की आत्मकथा भी कहा जा सकता है।

इस प्रकार, दिलीप कौर टिवाणा का जीवन और उनका रचनात्मक संसार एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। उनका लेखन निजी अनुभवों से शुरू होकर व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक आलोचना तक पहुँचता है। वे जिस समाज का हिस्सा रही हैं, उसी समाज की पितृसत्तात्मक संरचनाओं को प्रश्नांकित करती हैं। यही आत्मालोचनात्मक दृष्टि उनके लेखन को प्रामाणिक, सशक्त और साहित्यिक रूप से महत्त्वपूर्ण बनाती है।

3. आत्मकथा और चेतना-प्रवाह तकनीक

दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर की संरचना पारंपरिक आत्मकथात्मक लेखन से स्पष्ट रूप से भिन्न है। सामान्यतः आत्मकथाएँ जीवन को एक रैखिक, कालानुक्रमिक क्रम में प्रस्तुत करती हैं, जहाँ जन्म, शिक्षा, विवाह और कार्य-जीवन क्रमबद्ध ढंग से सामने आते हैं। इसके विपरीत, टिवाणा चेतना-प्रवाह तकनीक का प्रयोग करती हैं, जिसमें स्मृति, अनुभूति और विचार निरंतर एक-दूसरे में प्रवाहित होते रहते हैं। इस तकनीक में अतीत, वर्तमान और भविष्य की स्पष्ट सीमाएँ टूट जाती हैं और पाठक स्त्री-मन की आंतरिक यात्रा में प्रवेश करता है।

चेतना-प्रवाह तकनीक स्त्री-अनुभवों की अभिव्यक्ति के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है, क्योंकि स्त्री का जीवन स्वयं खंडित, दबा हुआ और असतत अनुभवों से निर्मित होता है। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री को अपनी बात कहने, अपने अनुभवों को क्रमबद्ध करने या उन्हें सार्वजनिक रूप से व्यक्त करने का अवसर प्रायः नहीं मिलता। ऐसे में स्मृतियाँ अचानक उभरती हैं, भावनाएँ असंगठित रूप में सामने आती हैं और अनुभव एक-दूसरे में गुँथे रहते हैं। टिवाणा की आत्मकथा इसी स्त्रीगत अनुभव-संरचना को साहित्यिक रूप देती है (टिवाणा)।

नंगे पैरां दा सफर में टिवाणा के बचपन, माँ के संघर्ष, दादी की चुप्पी, शिक्षा की आकांक्षा और विवाह के अनुभव किसी निश्चित क्रम में नहीं आते, बल्कि चेतना के प्रवाह के अनुसार सामने आते हैं। यह शैली पाठक को यह अनुभव कराती है कि स्त्री-जीवन कोई सीधी रेखा नहीं, बल्कि एक निरंतर चलने वाली आंतरिक प्रक्रिया है। यहाँ स्मृति केवल अतीत का पुनरावलोकन नहीं है, बल्कि वर्तमान को समझने और भविष्य की चेतना को गढ़ने का माध्यम भी है।

इस तकनीक का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि टिवाणा का निजी अनुभव धीरे-धीरे सामूहिक स्त्री-स्मृति में परिवर्तित हो जाता है। उनके जीवन की घटनाएँ केवल 'एक स्त्री' की कहानी नहीं रह जातीं, बल्कि वे उन असंख्य स्त्रियों के अनुभवों का प्रतिनिधित्व करने लगती हैं जो समान सामाजिक संरचनाओं में जीवन व्यतीत करती हैं। इस प्रकार टिवाणा का 'मैं' धीरे-धीरे 'हम' में बदल जाता है। यह रूपांतरण आत्मकथा को व्यक्तिगत वृत्तांत से उठाकर सामाजिक दस्तावेज बना देता है।

चेतना-प्रवाह तकनीक स्त्री-मन की जटिलताओं, संकोच, भय, द्वंद्व, आकांक्षा और प्रतिरोधकृको अभिव्यक्त करने का अवसर भी प्रदान करती है। टिवाणा अपने भीतर के संघर्षों को बिना किसी कृत्रिम क्रम या अलंकरण के प्रस्तुत करती हैं। यही सहजता उनके लेखन को प्रामाणिक बनाती है। इस दृष्टि से नंगे पैरां दा सफर केवल एक आत्मकथा नहीं, बल्कि स्त्री-अनुभवों की सामूहिक कथा है, जो चेतना-प्रवाह के माध्यम से अपनी सम्पूर्णता में सामने आती है।

4. जेंडर और पितृसत्तात्मक संरचना

पितृसत्ता नंगे पैरां दा सफर का केंद्रीय और सर्वव्यापी विषय है। टिवाणा यह स्पष्ट करती हैं कि पितृसत्ता केवल पारिवारिक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के माध्यम से स्त्री-जीवन को नियंत्रित करती है। समाज में स्त्री की पहचान को उसकी जैविक भूमिका, विशेषतः मातृत्व और पुत्र-प्रसवकृसे जोड़ दिया जाता है। परिणामस्वरूप स्त्री को एक स्वतंत्र और पूर्ण व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि एक कार्यात्मक इकाई के रूप में देखा जाता है।

टिवाणा की माँ चंद कौर का चरित्र इस पितृसत्तात्मक संरचना को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। पुत्र न जन्म दे पाने के कारण उन्हें निरंतर उपेक्षा, अपमान और मानसिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। उनका मूल्यांकन एक संवेदनशील मनुष्य या जीवन-संगिनी के रूप में नहीं, बल्कि केवल पुत्र-उत्पादन की क्षमता के आधार पर किया जाता है। यहाँ स्त्री का सम्पूर्ण अस्तित्व उसकी जैविक उपयोगिता तक सीमित कर दिया जाता है।

इस संदर्भ में सिमोन द बोउवार की अवधारणा ‘स्त्री एक अन्य है’ पूर्णतः चरितार्थ होती है। बोउवार के अनुसार पुरुष को समाज में मानक के रूप में स्थापित किया जाता है, जबकि स्त्री को उसके सापेक्ष ‘अन्य’ के रूप में परिभाषित किया जाता है (बोउवार)। नंगे पैरां दा सफर में चंद कौर और अन्य स्त्री-पात्र इसी ‘अन्य’ की स्थिति में जीते हुए दिखाई देते हैं।

टिवाणा यह भी रेखांकित करती हैं कि पितृसत्ता केवल पुरुषों द्वारा थोपे गए नियमों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि स्त्रियाँ स्वयं भी इसे आंतरिकीकृत कर लेती हैं। दादी और अन्य स्त्री-पात्र पितृसत्तात्मक मूल्योंकृपुत्र-प्राथमिकता, स्त्री-सहनशीलता और आज्ञाकारिताकृको पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाती दिखाई देती हैं। इस प्रकार पितृसत्ता एक सामाजिक संरचना के रूप में स्वयं को पुनरुत्पादित करती रहती है।

महत्वपूर्ण यह है कि टिवाणा इस संरचना को केवल वर्णित नहीं करतीं, बल्कि उसे प्रश्नांकित भी करती हैं। आत्मकथा के माध्यम से वे यह स्पष्ट करती हैं कि पितृसत्ता कोई प्राकृतिक व्यवस्था नहीं, बल्कि सामाजिक निर्माण है, जिसे बदला जा सकता है। स्त्री की शिक्षा, आत्मचिंतन और लेखन इस बदलाव के महत्वपूर्ण साधन बनते हैं। इस प्रकार नंगे पैरां दा सफर जेंडर असमानता की आलोचना करते हुए स्त्री-चेतना के विकास की दिशा भी संकेतित करती है।

5. पुत्र-प्राथमिकता और स्त्री-देह का नियंत्रण

भारतीय समाज में पुत्र-प्राथमिकता एक गहरी जड़ें जमाए हुई सामाजिक-सांस्कृतिक सच्चाई है, जो पितृसत्तात्मक मूल्यों से संचालित होती है। दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा

सफर में यह प्रवृत्ति बार-बार उभरकर सामने आती है। परिवार और समाज में स्त्री का मूल्यांकन उसके मानवीय गुणों, संवेदनशीलता या श्रम के आधार पर नहीं, बल्कि उसके द्वारा जन्मे पुत्रों की संख्या के आधार पर किया जाता है। इसके विपरीत, पुत्री को बोझ, पराया धन और सामाजिक-आर्थिक भार के रूप में देखा जाता है। यह मानसिकता स्त्री की सामाजिक स्थिति को और अधिक कमजोर तथा असुरक्षित बना देती है (टिवाणा)।

पुत्र-प्राथमिकता की यह विचारधारा स्त्री-देह को केवल वंश-वृद्धि के उपकरण के रूप में देखने की मानसिकता को उजागर करती है। स्त्री का शरीर उसकी अपनी सत्ता नहीं रह जाता, बल्कि परिवार और समाज की अपेक्षाओं की पूर्ति का माध्यम बन जाता है। टिवाणा की माँ चंद कौर का बार-बार गर्भधारण इसी पितृसत्तात्मक दबाव का परिणाम है। यहाँ यह स्पष्ट होता है कि स्त्री के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की कोई चिंता नहीं की जातीय उसका शरीर निरंतर सामाजिक आदेशों के अधीन रहता है। मातृत्व को स्त्री का 'स्वाभाविक धर्म' घोषित कर दिया जाता है, जबकि उसके कष्ट, पीड़ा और थकान को अनदेखा कर दिया जाता है।

नारीवादी दृष्टिकोण से देखा जाए तो यह स्थिति स्त्री-देह पर सामाजिक नियंत्रण का एक स्पष्ट उदाहरण है। स्त्री की प्रजनन क्षमता को नियंत्रित कर समाज न केवल वंश और संपत्ति की निरंतरता सुनिश्चित करता है, बल्कि अपनी सत्ता-संरचना को भी बनाए रखता है। सिमोन द बोउवार के अनुसार स्त्री को उसकी जैविक भूमिकाओं तक सीमित कर देना उसे स्वतंत्र मनुष्य के रूप में स्वीकार न करने का परिणाम है (बोउवार)। नंगे पैरां दा सफर में यह विचार व्यवहारिक स्तर पर मूर्त रूप लेता दिखाई देता है।

महत्वपूर्ण यह है कि टिवाणा का लेखन केवल व्यक्तिगत पीड़ा का विवरण नहीं देता, बल्कि उस व्यापक सामाजिक संरचना की आलोचना भी करता है जो स्त्री को देह तक सीमित कर देती है। आत्मकथा यह स्पष्ट करती है कि पुत्र-प्राथमिकता केवल एक पारिवारिक पसंद नहीं, बल्कि एक वैचारिक व्यवस्था है, जो जेंडर असमानता को पीढ़ी-दर-पीढ़ी बनाए रखती है। इस प्रकार नंगे पैरां दा सफर में पुत्र-प्राथमिकता का प्रश्न जेंडर, पितृसत्ता और स्त्री-देह के शोषण से गहराई से जुड़ा हुआ दिखाई देता है और आत्मकथा एक सशक्त नारीवादी पाठ के रूप में उभरती है।

6. विवाह संस्था और जेंडर असमानता

दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर में विवाह एक ऐसी सामाजिक संस्था के रूप में प्रस्तुत होता है, जो स्त्री के लिए सुरक्षा, स्थायित्व और सम्मान से अधिक बंधन, अनुशासन और नियंत्रण का माध्यम बन जाती है। भारतीय पितृसत्तात्मक समाज में विवाह को स्त्री के जीवन का अंतिम और अनिवार्य लक्ष्य मान लिया जाता है। इस प्रक्रिया में उसकी शिक्षा, इच्छाएँ, सपने और आत्मनिर्णय गौण हो जाते हैं। कम उम्र में विवाह, बिना स्त्री की सहमति के लिए गए निर्णय

और विवाह टूटने या असफल होने की स्थिति में सामाजिक कलंककृये सभी अनुभव स्त्री-अस्मिता को गहरे स्तर पर प्रभावित करते हैं (टिवाणा)।

टिवाणा के अपने विवाह का प्रसंग इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि किस प्रकार एक लड़की की इच्छा और आकांक्षाओं को 'परिवार की इज्जत' और 'सामाजिक मर्यादा' के नाम पर दबा दिया जाता है। विवाह यहाँ प्रेम, संवाद और समानता का संबंध नहीं बन पाता, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व और मान-सम्मान का बोझ बन जाता है। स्त्री से अपेक्षा की जाती है कि वह नए परिवार में स्वयं को पूरी तरह समर्पित कर दे और अपनी पहचान को पत्नी की भूमिका में विलीन कर दे।

सिमोन द बोउवार के अनुसार विवाह संस्था स्त्री को पुरुष पर निर्भर बनाने और उसकी पहचान को सीमित करने का एक प्रमुख साधन है। विवाह के बाद स्त्री की सामाजिक पहचान 'व्यक्ति' के रूप में नहीं, बल्कि 'किसी की पत्नी' के रूप में निर्धारित होती है (बोउवार)। नंगे पैरां दा सफर में टिवाणा का अनुभव इस सैद्धांतिक दृष्टि की व्यावहारिक पुष्टि करता है। परन्तु उसकी स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय की कीमत पर विवाह स्त्री को सामाजिक स्वीकृति तो देता है।

टिवाणा यह भी दिखाती हैं कि विवाह संस्था केवल पुरुषों द्वारा संचालित नहीं होती, बल्कि स्त्रियाँ स्वयं भी पितृसत्तात्मक मूल्यों को आत्मसात कर इसे बनाए रखती हैं। सास, दादी और अन्य स्त्री-पात्र विवाह के माध्यम से स्त्री को अनुशासन और त्याग का पाठ पढ़ाती दिखाई देती हैं। इस प्रकार विवाह एक ऐसी संस्था बन जाता है जो जेंडर असमानता को वैध और स्थायी बना देता है।

अंततः, नंगे पैरां दा सफर में विवाह संस्था की आलोचना स्त्री-अस्मिता की पुनर्स्थापना की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। टिवाणा का लेखन यह स्पष्ट करता है कि विवाह कोई प्राकृतिक या अपरिवर्तनीय व्यवस्था नहीं, बल्कि सामाजिक निर्माण है, जिसे बदला और पुनर्परिभाषित किया जा सकता है। इस दृष्टि से यह आत्मकथा जेंडर असमानता के विरुद्ध एक सशक्त वैचारिक हस्तक्षेप बन जाती है।

7. सबाल्टर्न स्त्री और मौन की राजनीति

गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक के अनुसार सबाल्टर्न की सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि उसकी आवाज सत्ता के विमर्श में सुनी ही नहीं जाती (स्पिवाक)। सबाल्टर्न केवल आर्थिक या सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ वर्ग नहीं है, बल्कि वह ऐसा वर्ग है जिसकी अनुभूतियाँ, विचार और पीड़ाएँ इतिहास, साहित्य और राजनीति के मुख्य विमर्श से व्यवस्थित रूप से बाहर रखी जाती हैं। जब यह अवधारणा स्त्री के संदर्भ में लागू होती है, तो स्थिति और भी जटिल हो जाती है, क्योंकि स्त्री सबाल्टर्न न केवल वर्ग और जाति के कारण, बल्कि अपने जेंडर के कारण भी मौन में धकेल दी जाती है।

दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर की स्त्रियाँकृदादी, माँ, गुलाब कौर और धन्नीकृसभी किसी न किसी रूप में इसी स्त्री-सबाल्टर्न स्थिति की प्रतिनिधि हैं। उनके जीवन के निर्णय पुरुषों और सामाजिक संरचनाओं द्वारा तय किए जाते हैं। विवाह, मातृत्व, श्रम और सहनशीलताकृइन सभी क्षेत्रों में उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे बिना प्रश्न किए सामाजिक नियमों का पालन करें। उनकी इच्छाओं, आकांक्षाओं और पीड़ाओं को महत्व नहीं दिया जाता, बल्कि उन्हें स्वाभाविक, नियत या अपरिहार्य मान लिया जाता है।

यह मौन केवल व्यक्तिगत चुप्पी नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचनाओं द्वारा थोपा गया एक दमनकारी मौन है। स्त्री की पीड़ा को 'नियति', 'परंपरा', 'संस्कार' या कभी-कभी 'दुर्घटना' कहकर वैध ठहरा दिया जाता है। इस प्रक्रिया में शोषण की वास्तविक संरचना अदृश्य बनी रहती है और स्त्री स्वयं भी अपनी पीड़ा को व्यक्त करने की भाषा खो बैठती है। स्पिवाक के शब्दों में, सबाल्टर्न बोलना चाहती है, परंतु उसे बोलने का मंच और भाषा दोनों नहीं मिलते (स्पिवाक)।

टिवाणा का लेखन इस मौन को तोड़ने का एक सशक्त प्रयास है। आत्मकथा के माध्यम से वे उन स्त्रियों को भाषा प्रदान करती हैं जिन्हें समाज ने चुप रहने के लिए बाध्य किया है। यह लेखन केवल आत्म-अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि एक राजनीतिक हस्तक्षेप भी है। टिवाणा की आत्मकथा स्त्री-सबाल्टर्न की व्यक्तिगत और सामूहिक स्मृतियों को सामने लाकर यह सिद्ध करती है कि मौन कोई स्वाभाविक अवस्था नहीं, बल्कि सत्ता द्वारा निर्मित स्थिति है। इस दृष्टि से नंगे पैरां दा सफर एक सामूहिक स्त्री-स्वर के रूप में उभरती है, जो इतिहास के हाशिये पर धकेली गई स्त्रियों की आवाज बनती है।

8. वर्ग और जाति का अंतर्संबंध

दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर में जेंडर के साथ-साथ वर्ग और जाति का प्रश्न भी गहराई से जुड़ा हुआ है। लेखिका यह स्पष्ट करती हैं कि सभी स्त्रियाँ समान रूप से उत्पीड़ित नहीं होतींय उनकी स्थिति उनके वर्गीय और जातिगत स्थान से भी निर्धारित होती है। इस प्रकार स्त्री-अनुभव को केवल जेंडर के आधार पर समझना अधूरा होगा। वर्ग और जाति स्त्री-जीवन को और अधिक जटिल तथा असमान बना देते हैं।

निम्न वर्ग और निम्न जाति की स्त्रियाँ दोहरे और तिहरे शोषण का सामना करती हैं। एक ओर वे पितृसत्तात्मक नियंत्रण के अधीन होती हैं, दूसरी ओर आर्थिक अभाव और जातिगत भेदभाव उनके जीवन की संभावनाओं को सीमित कर देते हैं। टिवाणा की दादी और माँ के अनुभव इस सामाजिक सच्चाई को उजागर करते हैं। घरेलू श्रम, आर्थिक निर्भरता और सामाजिक उपेक्षा उनके जीवन की स्थायी स्थितियाँ बन जाती हैं। उनका श्रम आवश्यक होते हुए भी अदृश्य बना रहता है और उन्हें किसी प्रकार की सामाजिक या आर्थिक सुरक्षा प्राप्त नहीं होती।

जयवंती डिमरी के अनुसार ग्रामीण समाज में स्त्री की स्थिति वर्गीय और जातिगत संरचनाओं

से गहराई से प्रभावित होती है, जिसके कारण उसका शोषण बहुस्तरीय रूप धारण कर लेता है (डिमरी)। नंगे पैरां दा सफर में यह अंतर्संबंध स्पष्ट और जीवंत रूप में देखा जा सकता है। टिवाणा यह दिखाती हैं कि उच्च वर्ग या जमींदार परिवार से जुड़ी स्त्री को भी पितृसत्ता का सामना करना पड़ता है, परंतु निम्न वर्ग और निम्न जाति की स्त्रियों की स्थिति कहीं अधिक दयनीय होती है।

महत्वपूर्ण यह है कि टिवाणा इन अंतर्संबंधों को केवल वर्णित नहीं करतीं, बल्कि उन्हें आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं। उनकी आत्मकथा यह संकेत देती है कि स्त्री-मुक्ति का प्रश्न तब तक पूर्ण नहीं हो सकता, जब तक वर्ग और जाति की असमानताओं को साथ-साथ संबोधित न किया जाए। इस प्रकार नंगे पैरां दा सफर एक अंतर्विभागीय (पदजमतेमबजपवदंस) नारीवादी पाठ के रूप में सामने आती है, जो जेंडर, वर्ग और जाति के संयुक्त प्रभाव को समझने में सहायक सिद्ध होती है।

9. स्त्री-प्रतिरोध और चेतना

यद्यपि दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर में स्त्रियाँ प्रायः पीड़ित, मौन और उपेक्षित रूप में सामने आती हैं, फिर भी यह कृति स्त्री-प्रतिरोध की सूक्ष्म लेकिन अत्यंत सशक्त झलकियाँ भी प्रस्तुत करती है। यहाँ प्रतिरोध किसी प्रत्यक्ष विद्रोह या टकराव के रूप में नहीं, बल्कि चेतना के विकास, आत्मबोध और आत्म-अभिव्यक्ति के माध्यम से सामने आता है। टिवाणा का लेखन यह संकेत देता है कि स्त्री-प्रतिरोध केवल बाहरी संघर्षों तक सीमित नहीं है, बल्कि वह भीतर घटित होने वाली एक दीर्घ और जटिल प्रक्रिया भी है।

टिवाणा की शिक्षा के प्रति आकांक्षा इस प्रतिरोध का पहला और महत्वपूर्ण रूप है। पितृसत्तात्मक समाज में जहाँ स्त्री-शिक्षा को अनावश्यक या खतरनाक माना जाता है, वहीं टिवाणा का पढ़ने-लिखने की ओर झुकाव स्वयं में एक चुनौती बन जाता है। शिक्षा उनके लिए केवल ज्ञानार्जन का साधन नहीं, बल्कि आत्मनिर्णय और आत्मसम्मान की दिशा में एक कदम है। शिक्षा के माध्यम से वे सामाजिक संरचनाओं को समझने लगती हैं और उन प्रश्नों को पहचानती हैं, जिन्हें पहले 'स्वाभाविक' मान लिया गया था।

आत्मचिंतन टिवाणा के प्रतिरोध का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है। नंगे पैरां दा सफर में वे अपने जीवन-अनुभवों को केवल स्मृतियों के रूप में नहीं, बल्कि आलोचनात्मक दृष्टि से देखती हैं। वे यह प्रश्न उठाती हैं कि स्त्री-पीड़ा को नियति क्यों मान लिया जाता है, स्त्री-त्याग को आदर्श क्यों बनाया जाता है और स्त्री-मौन को संस्कार क्यों कहा जाता है। यह आत्मचिंतन पितृसत्तात्मक मूल्यों के विरुद्ध एक वैचारिक प्रतिरोध है, जो धीरे-धीरे स्त्री-चेतना को विकसित करता है।

लेखन टिवाणा के लिए प्रतिरोध का सबसे सशक्त माध्यम बनता है। गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक के अनुसार सबाल्टर्न की सबसे बड़ी समस्या उसकी 'आवाज का अभाव' है (स्पिवाक)। टिवाणा का

लेखन इस अभाव को चुनौती देता है। आत्मकथा के माध्यम से वे न केवल अपनी, बल्कि दादी, माँ और अन्य स्त्रियों की अनकही पीड़ाओं को भी भाषा प्रदान करती हैं। इस प्रकार लेखन एक निजी क्रिया न रहकर एक राजनीतिक और नारीवादी हस्तक्षेप बन जाता है।

महत्वपूर्ण यह है कि टिवाणा का प्रतिरोध पितृसत्तात्मक सीमाओं के भीतर रहते हुए विकसित होता है। वे समाज से पूरी तरह कटकर नहीं, बल्कि उसी समाज के भीतर रहते हुए प्रश्न उठाती हैं। यही कारण है कि उनका प्रतिरोध अधिक विश्वसनीय और प्रभावी बनता है। वे यह दर्शाती हैं कि स्त्री-चेतना का विकास किसी एक क्षण की घटना नहीं, बल्कि एक निरंतर प्रक्रिया है, जिसमें अनुभव, स्मृति और विचार एक-दूसरे से जुड़ते हैं।

नंगे पैरां दा सफर इस अर्थ में केवल पीड़ा की कथा नहीं है, बल्कि संभावनाओं की भी कथा है। यह आत्मकथा स्त्री-अस्मिता की पुनर्परिभाषा करती है और यह स्थापित करती है कि स्त्री केवल दमन की शिकार नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की सक्रिय वाहक भी हो सकती है। टिवाणा का लेखन यह संदेश देता है कि जब स्त्री अपनी चेतना को पहचान लेती है और उसे अभिव्यक्त करती है, तब वह इतिहास और समाज के हाशिये से केंद्र की ओर बढ़ने लगती है।

अंततः, नंगे पैरां दा सफर में स्त्री-प्रतिरोध और चेतना का प्रश्न यह स्पष्ट करता है कि स्त्री-मुक्ति केवल कानूनी या सामाजिक सुधारों से संभव नहीं है, बल्कि उसके लिए स्त्री-चेतना का विकास अनिवार्य है। इस दृष्टि से टिवाणा की आत्मकथा न केवल साहित्यिक कृति है, बल्कि एक वैचारिक दस्तावेज भी है, जो स्त्री-सशक्तिकरण और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

10. निष्कर्ष

दिलीप कौर टिवाणा की आत्मकथा नंगे पैरां दा सफर एक ऐसी साहित्यिक कृति है जो निजी जीवन-अनुभवों के माध्यम से व्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक सच्चाइयों को उजागर करती है। यह आत्मकथा केवल एक स्त्री के जीवन की कथा नहीं है, बल्कि वह उस सामाजिक संरचना का दस्तावेज है जिसमें स्त्री को पितृसत्ता, वर्ग और जाति के जटिल अंतर्संबंधों के बीच अपना जीवन जीना पड़ता है। टिवाणा का लेखन यह स्पष्ट करता है कि स्त्री-अनुभव को समझे बिना समाज की समग्र संरचना को समझना संभव नहीं है।

प्रस्तुत अध्ययन से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि पितृसत्ता केवल पारिवारिक स्तर पर सीमित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के माध्यम से स्त्री-जीवन को नियंत्रित करती है। विवाह संस्था, पुत्र-प्राथमिकता और स्त्री-देह पर नियंत्रण जैसे पक्ष यह दर्शाते हैं कि स्त्री को एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक अपेक्षाओं की पूर्ति करने वाले माध्यम के रूप में देखा जाता है। इस संदर्भ में टिवाणा की आत्मकथा सिमोन द बोउवार की

'स्त्री एक अन्य है' की अवधारणा को भारतीय सामाजिक संदर्भ में मूर्त रूप देती है (बोउवार)।

यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि स्त्री की 'बेजबानी' कोई प्राकृतिक या सहज अवस्था नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचनाओं द्वारा निर्मित एक राजनीतिक स्थिति है। गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक के सबाल्टर्न सिद्धांत के आलोक में देखा जाए तो नंगे पैरां दा सफर की स्त्रियाँ उस सबाल्टर्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं जिसकी आवाज को इतिहास और सत्ता-संरचनाओं ने व्यवस्थित रूप से दबा दिया है (स्पिवाक)। टिवाणा का लेखन इस मौन को तोड़ने का प्रयास करता है और स्त्री-सबाल्टर्न को भाषा, पहचान और दृष्टि प्रदान करता है।

वर्ग और जाति के संदर्भ में यह आत्मकथा यह दर्शाती है कि स्त्री का शोषण एकरैखिक नहीं है, बल्कि वह बहुस्तरीय है। निम्न वर्ग और निम्न जाति की स्त्रियाँ जेंडर के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक शोषण का भी सामना करती हैं। इस प्रकार टिवाणा का लेखन अंतर्विभागीय दृष्टि को अपनाता है, जो स्त्री-अनुभवों की जटिलता को समझने में सहायक सिद्ध होती है (डिमरी)।

साथ ही, नंगे पैरां दा सफर केवल पीड़ा और दमन की कथा नहीं है, यह स्त्री-प्रतिरोध और चेतना की भी कथा है। शिक्षा, आत्मचिंतन और लेखन के माध्यम से टिवाणा उस ऐतिहासिक मौन को तोड़ती हैं जो सदियों से स्त्रियों पर थोपा गया है। यह आत्मकथा स्वयं में एक नारीवादी और राजनीतिक हस्तक्षेप है, जो स्त्री-अस्मिता को पुनः स्थापित करने और सामाजिक परिवर्तन की संभावना को रेखांकित करती है।

अंततः, यह कहा जा सकता है कि दिलीप कौर टिवाणा की नंगे पैरां दा सफर भारतीय स्त्री-आत्मकथात्मक साहित्य में एक महत्वपूर्ण कृति है। यह न केवल स्त्री-अनुभवों को केंद्र में लाती है, बल्कि पितृसत्तात्मक समाज की जटिल संरचनाओं पर एक सशक्त आलोचनात्मक दृष्टि भी प्रस्तुत करती है। इस दृष्टि से यह आत्मकथा साहित्यिक मूल्य के साथ-साथ सामाजिक और वैचारिक महत्त्व भी रखती है।

संदर्भ सूची

बोउवार, सिमोन द. (1989). *द सेकंड सेक्स* (एच. एम. पार्श्ले, अनुवाद). विंटेज बुक्स. (मूल कृति प्रकाशित 1949)

डिमरी, जयवंती. (2006). *स्त्री और समाज: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन*. वाणी प्रकाशन.

स्पिवाक, गायत्री चक्रवर्ती. (1988). क्या सबाल्टर्न बोल सकता है? In कैरी नेल्सन & लॉरेंस ग्रॉसबर्ग (सम्पा.), *मार्क्सवाद और संस्कृति की व्याख्या* (पृ. 271–313). यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनॉय प्रेस.

टिवाणा, दिलीप कौर. (1996). *नंगे पैरां दा सफर*. पंजाबी यूनिवर्सिटी प्रेस.